UGC Approved Journal
Research Link

Since March 2002

An International, Registered & Referred Monthly Journal : Music
Research Link - 163, Vol - XVI (8), October - 2017, Page No. 136-138
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782

# दरभंगा घराने की संगीत परम्परा

*प्रस्तुत शोधपत्र, दरभंगा घराने की संगीता परम्परा के विश्लेषण पर आधारित है। दरभंगा की ध्रुपद परम्परा की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं, पद स्तुतिपरक होते हैं, आलाप और बंदिश दोनों में मींड़ और घसीट का काम अधिक होता है। जोड़ में लय बढ़ने पर भी स्वर प्रयोग गमक के साथ ही होता है। बंदिश के स्वरुप और सौन्दर्य की रक्षा के लिए ध्रुपद में लयकारी कम की जाती है। लयकारी ऐसे ध्रुपदों में ही की जाती है, जिनमें शब्द अधिक तथा गमक जैसे अलंकरण कम होते हैं। अर्थात् ध्रुपद दो प्रकार के मान जा सकते हैं, कुछ गमक प्रधान होते हैं, ऐसे ध्रुपदों में लयकारी नहीं की जाती। पद-प्रधान ध्रुपदों में लयकारी का काम होता है। वस्तुतः बंदिश के स्वरुप और सौन्दर्य की रक्षा के लिए ध्रुपद में लयकारी कम की जाती है। जितना काम होता भी है, उसमें इस बात का ध्यान रखा जाता है कि बंदिश के मूल रुप में निहित गमक प्रयोग की रक्षा हो सके। परन्तु, वर्तमान युग में ध्रुपद में अलग-अलग छंद के एवं अलग-अलग मात्राओं से विभिन्न एवं कठिन लयकारियाँ भी सुनने को मिलती है, जिसके फलस्वयप इसमें और भी श्रृंगार रस का संगम देखने को मिलता है।*

**प्रियंका मलिक**

उत्तर भारत की घरानेदार संगीत परम्परा के मंच पर आज ध्रुदपद–गायन की मुख्यतः दो शैलियों का प्रचार पाया जाता है–डागर परम्परा और दरभंगा की मल्लिक परम्परा। वर्तमान काल में मल्लिक परम्परा के प्रायः सभी ध्रुवपद गायक दरभंगा घराने से ही सम्बद्ध है। मौखिक जानकारी से यह विदित होता है कि दरभंगा की ध्रुवपद से दरभंगा घराने के कलाकार सेनिया घराने से जुड़े हुए है। कहा जाता है कि स्वामी हरिदास और तानसेन गौड–ब्राह्मण थे। यह परम्परा ध्रुवपद की चार बानियों से खण्डार एवं गोबरहारी बानी से सम्बद्ध बताई जाती है। सम्भवतः गौरहारी शब्द 'गौडहरि' शब्द का अपभ्रंश हो। यह भी कहा जा सकता है कि यहाँ प्रयुक्त हरि शब्द किसी प्रकार हरिदास की ओर संकेत करता हो।

दरभंगा के मल्लिक घराने के पूर्वज मूलतः ब्रज और राजस्थान के निकटवर्ती प्रदेश के निवासी थे। उपलब्ध जानकारी के अनुसार इस वंश में आज से ग्यारह पीढ़ी पहले सर्वप्रथम स्व0 पं0 सीताराम, रामनिवाजा, राधाकृष्ण और कर्ताराम मल्लिक नाम के चार भाई हुए थे। इनके पूर्व के वंश का कोई भी परिचय प्राप्त नही होता। इन चार भाइयों में से पहले दोनों बड़े भाई संगीत की शिक्षा लेने के लिए गए, परन्तु गला ठीक न होने के कारण उन्हें वापस लौटना पड़ा। बाद में तीसरे और चौथे भाई अर्थात् राधाकृष्ण और कर्ताराम मल्लिक दस वर्ष की आयु में संगीत की शिक्षा लेने स्व0 उस्ताद भूपत खॉ के पास गए। कहा जाता है कि भूपत खॉ उन दिनों अवध के नवाब शुजाउद्दौला के दरबार में थे। श्रीमती सुलोचना यजुर्वेदी एवं आचार्य वृहस्पति ने यह उल्लेख किया है कि भूपत खॉ गायक थे।[1] इनके आधार पर यह अनुमान किया जा सकता है कि भूपत खॉ से इन दोनों भाइयों ने मुख्य रूप से गायन की शिक्षा ली होगी।

इतिहास–ग्रन्थों से यह विदित होता है कि भूपत खॉ तानसेन की पौत्री के वंश में हुए थे। तानसेन के चार पुत्रों में से बिलास खॉ की पुत्री का विवाह तानसेन के ही एक शिष्य लाल खॉ से हुआ था। लाल खॉ के चार पुत्रों में से बलिराम खॉ के पुत्र भूपत खॉ थे।[2] यह तथ्य मौखिक परम्परा में प्रचलित इस बात से मेल नही खाता कि भूपत खां सदारंग के पुत्र थे। अपने चाचा खुशहाल खॉ के साथ भूपत खॉ औरंगजेब के दरबार मे तो थे, पर वे शुजाउद्दौली के दरबार में रहे भी है या नहीं, इस विषय में कोई ऐतिहासिक प्रमाण प्राप्त नही हो सका। इतना उल्लेख अवश्य प्राप्त होता है कि औरंगजेब के दरबार में संगीत के लिए उपयुक्त वातावरण नहीं रह गया था। अतः अन्य कलाकारों के समान भूपत खां को भी अन्य आश्रयदाओं की शरण लेनी पड़ी।[3] संभावना है कि भूपत खॉ इसी समय अवध के नवाब के लखनऊ दरबार में पहुँचे हों। भूपत खॉ के पिता बिसराम खॉ की मृत्यु 1671 अथवा 1672 ई0 में हुई।[4] यदि यह मान लिया जाय कि भूपत खॉ के पिता बिसराम खॉं का जन्म अपने पिता की मृत्यु के समय अर्थात 1672 ई0 में हुआ हो तो शुजाउद्दौला की मृत्यु 1775 ई0 में हुई थी।[5] मौखिक परम्पर से यह विदित होता है कि स्व0 पं0 राधाकृष्ण और कर्ताराम ने लगभग 35 वर्ष की आयु तक भूपत खॉं से शिक्षा ग्रहण की। इससे यह अनुमान होता है कि भूपत खॉं की आयु काफ़ी लम्बी रही होगी।

लगभग तीस वर्ष की आयु तक शिक्षा प्राप्त करने के बाद दोनो भाइयों ने गुरू के सम्मुख अपनीं यह इच्छा व्यक्त की कि वे अपने माता–पिता से मिलने के लिए जाना चाहते हैं, परन्तु गुरूपत्नी के कहने पर उन्हें अपनी शिक्षा पूरी करने के लिये पाँच

*एस.आर.एफ., इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद ( उत्तरप्रदेश )*

वर्ष तक वहाँ और रूकना पड़ा। अन्ततः लगभग 35 वर्ष की शिक्षण के उपरान्त गुरू ने दोनों भाइयों को काफी भार मान दे विदा किया। शिक्षा पूरी हो जाने के बाद गुरू भूपत खाँ ने नवाब शुजाउद्दौला के सामने इच्छा जाहिर की कि उन्होंने दो हिन्दू शिष्यों को तैयार किया है तथा उनका गायन दरबार में करवाया जाए। भूपत खाँ के हिन्दू शिष्यों से किसी प्रकार की विशेष आशा न होने के कारण प्रारम्भ में गुरू की इच्छा ही की गयी, परन्तु गुरू के बार–बार आग्रह करने पर दोनों भाइयों के गायन का कार्यक्रम दरबार में आयोजित किया गया। भूपत खाँ के हिन्दू शिष्यों से किसी प्रकार की विशेष आशा न हो के कारण प्रारम्भ में गुरू की इच्छा की उपेक्षा ही की गयी, परन्तु गुरू के बार–बार आग्रह करने पर दोनों भाइयों के गायन का कार्यक्रम दरबार में आयोजित किया गया। दोनों ने अपनी कला से सभी को अप्रत्याशित रूप से प्रभावित किया। सम्भवतः इसी समय से दोनों भाइयों को नवाब का दरबारी गायक नियुक्त कर दिया गया। इसी बीच तत्कालीन दरभंगा–नरेश प्रसंगवश लखनऊ पहुँचे। उन्होंने भी दोनों भाइयों का गायन सुना और उनकी कला से प्रभावित होकर उन्हें अपने दरबार में आमन्त्रित किया। नरेश के आमन्त्रण पर बाद में वे दोनों भाई दरभंगा गये लगातार तीन वर्षो से वर्षा न होने के कारण, दरभंगा रियासत में भयंकर दुर्भिक्ष फैला हुआ था। अनके पण्डितों और तांत्रिकों ने वर्षा के लिए प्रयास किए पर वे भी विफल रहे। अतः नरेश ने इन दोनों गायक कलाकारों को बुलावा भेजा और उनसे यह कहा कि ''मैने सुना है कि मल्हार गाने से वर्षा होती है, कृपया आप दोनों मल्हार गाकर वर्षा करवाने का प्रयास करें।'' दोनों भाइयों ने मिलकर गायन प्रस्तुत किया और नरेश को अपेक्षित परिणाम भी प्राप्त हुआ। इस चमत्कार से प्रसन्न होकर दरभंगा नरेश ने उन्हें जागीर देकर अपना दरबारी गायक नियुक्त करना चाहा। शुजाउद्दौला से अनुमति लेकर प्रारम्भ में दोनों ने यह निश्चय किया वे लखनऊ और दरभंगा में क्रमशः छः–छः माह रहा करेंगे। परन्तु जागीर लेने से उन्होंने इन्कार कर दिया, पर दरभंगा नरेश के आग्रह करने पर दोनों बन्धुओं ने इस शर्त पर स्वीकृति दी कि उन्हें रियासत की ओर से कर–मुक्त नहीं समझा जाएगा। जागीर के रूप में उन्हें दरभंगा के पूर्व में स्थित अमता ग्राम में लगभग 1200 बीघा जमीन एवं अमता, गंगदह और नारायणदोहट इन तीन गाँवों की मालकियत प्राप्त हुई। परन्तु जागीर के क्षेत्र में जंगलात ज्यादा होने के कारण ये दोनों भाई अपने जीवन के अन्तिम समय तक हाजीपुर वैशाली के निकट गंगा के किनारे घटारों ग्राम ही रहते रहें। बाद में इन दोनों भाइयों को स्थायी रूप से एकमात्र दरभंगा दरबार का गायक नियुक्त कर दिया गया। तभी से इस परम्परा के सभा संगीत कलाकारों को वंशानुगत रूप में दरबार की ओर से आश्रय प्राप्त होता रहा। इसी बीच दरभंगा रियासत से दोनों भाई बीच में नेपाल भी गए। वहाँ भी इन्होंने अपनी कला में चमत्कार से नेपाल नरेश की प्रभावित कर लिया। नेपाल नरेश ने इनको पूर्णिया जिले में 1600 एकड़ जमीन दी थी। बाद में यह जमीन कर्ताराम की पौत्रवधू अर्थात् निहालसिंह की पत्नी के द्वारा अंग्रेजों को दे दी गयी। इनकी मृत्यु होने पर दोनों भाइयों की पत्नियाँ भी गंगापट पर सती हो गयी। कहा जाता है कि इस वंश में कुल तीन सतियाँ हुई, परन्तु तीसरी सती के विषय में कोई भी जानकारी प्राप्त नहीं होती। सती से इस वंश को यह आर्शीवाद प्राप्त हुआ था कि इस वंश में एक न एक कलाकार सदा पैदा होता रहेगा। राधाकृष्ण और कर्ताराम की मृत्यु के बाद इनके वंशज अपनी जागीर के क्षेत्र अर्थात् अमता उर्फ विष्णुगांगों में रहने लगे। जागीर के मालिक होने के कारण इस वंश के लोग व्यवहार में ''मालिक'' शब्द परिवर्तित होकर ''मल्लिक'' हो गया तभी से ध्रुवपद–गायकों का यह ब्राह्मण वंश ''मल्लिक'' कहलाने लगा।

कहा जाता है कि बाद में भूपत खाँ के पुत्र निर्मलशाह अपने गुरू–भाइयों से मिलने के लिए दरभंगा गए थे, परन्तु वहाँ पहुँचकर उन्हें जब यह ज्ञात हुआ कि दोनों ही भाइयों का स्वर्गवास हो चुका है, तो वे बड़े दुःखी हुए। निर्मलशाह लगभग छः माह तक अमता में ही रहे और वहाँ से लौटते समय अपनी बीन वहीं छोड़ गए। कहा जाता है कि निर्मलशाह द्वारा दी गयी यह बीन मल्लिक घराने के शिष्य–परम्परा में काफी दिनों तक सुरक्षित रही। कर्ताराम के पौत्र निहालसिंह इसी बीन का प्रयोग करते थे। बीसवीं सदी के चौथे दशक में आये भूकम्प में यह बीन ध्वस्त हो गयी। पर इसका दण्ड अवशेष रूप में आज घराने में सुरक्षित है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि वजीर खाँ ने पण्डित भातखण्डे को अपना जो वंशवृक्ष बतलाया था, उसके अनुसार निर्मलशाह जीवनशाह के पुत्र बताये गए हैं, परन्तु आचार्य वृहस्पति इस वंशवृक्ष को सही नहीं मानते।[6]

मल्लिक परम्परा का वंशवृक्ष आगे पृथक् रूप से दिया जा रहा है। प्रारम्भ की दो पीढ़ियों में कला को व्यावसायिक दृष्टि से विशेष महत्व नहीं दिया गया। कलाकार केवल अपने दरबार तक ही सीमित रहे। पर आगे चलकर स्व. पं. धर्मपाल, पं. छितिपाल तथा स्व. पं. राजितराम मल्लिक के द्वारा कला को व्यावसायिक स्तर पर ऊँचा उठाने का प्रयास किया गया। घराने में ध्रुवपद गायन के साथ बीन एवं पखावज वादन की परम्परा भी रही है। पर आजकल बीन का प्रचार शेष नहीं रह गया है इस घराने की प्रतिनिधि विशेष रूप से ध्रुवपद–गायन के शेत्र में ही हुई है। ध्रुवपद की इस परम्परा हस्तांतरण मुख्य रूप से वंशानुक्रम रूप में ही हुआ है। परम्परा के विशिष्ट कलाकार में स्व. पं. मल्लिक (ध्रुवपद गायक), स्व. पं. निहालसिंह मल्लिक (बीनकार), स्व. पं. क्षितिपाल मल्लिक (ध्रुवपद गायन), स्व. पं. राजितराम मल्लिक (ध्रुवपद गायक), स्व. पं. बाबू बेनीसिंह मल्लिक (ध्रुवपद गायक), स्व. पं. भीम मल्लिक (पखावजी), स्व. पं. बिसनदेव पाठक (पखावजी), स्व. पं. देवकीनन्दन पाठक (पखावजी) नाम उल्लेखनीय है। धर्मपाल जी अपनी गम्भीर गायकी तथा आलाप के लिए प्रख्यात थे। क्षितिपाल जी ने अपने चाचा के अलावा धर्मपाल जी से भी शिक्षा ली थी। इनकी गायकी भी गंभीर थी तथा गमकयुक्त लयकारी के लिये विख्यात हैं। रजित राम जी गायक तो थे ही, पदरचना भी स्वयं करते थे। ब्रज और संस्कृत के विद्वान थे तथा फारसी भी जानते थे। इन्होंने 'भक्तविनोद रागरत्नाकर' नामक एक पुस्तक भी लिखी थी। बाबू बेनीसिंह उर्फ नूनूबाबू घराने में अपनी पल्लेदार आवाज के लिए प्रसिद्ध है। इनकी रचनाओं में भक्तिपक्ष का प्राधान्य पाया जाता था। ये काफी गाढ़ी लय जाते थे। लयकारी करते भी थे तो बराबर या दुगुल की लय में। परन्तु गमक प्रयोग सर्वत्र बाहुल्य के साथ करते थे। गमक की बाँट की

दृष्टि से क्षितिपालजी के बाद इन्हीं का स्थान माना जाता है। इनके पास विभिन्न राग और तालों में पदों का अच्छा संगह था। पखावजी भीम बाबा अत्यधिक रियाजी थे।

मल्लिक परम्परा कलाकार के रूप में पद्मश्री स्व. पंडित रामचतुर मल्लिक का नाम लिया जाता है। इनके अतिरिक्त सर्वश्री स्व. पं. विदुर मल्लिक, पद्मश्री स्व. पं. सियाराम तिवारी, पं. अभयनारायण मल्लिक के नाम उल्लेखनीय हैं। पखावज वादन की दृष्टि से भी परम्परा में कुछ कलाकारों का नाम लिया जा सकता है, जैसे पं. रामाशीष पाठक, चन्द्र कुमार मल्लिक। वर्तमान में पं. अभय नारायण मल्लिक, पं. प्रेम कुमार मल्लिका, पं. राम कुमार मल्लिक, पं. रामाशीष पाठक (पखावज) के नाम उल्लेखनीय हैं।

जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है कि चार बानियों में से दरभंगा परम्परा का सम्बन्ध गौरहारी बानी से माना जाता है। इस परम्परा में मौखिक रूप से जो जानकारी प्राप्त होती है, उसके अनुसार गौरहारी बानी की विशेषताएँ इस प्रकार बतलाई जाती हैं। इस बानी में लय बिलंबित होती है तथा स्वर प्रयोग गंभीरता से युक्त होता है। यह भी कहा जाता है कि इस बानी में शब्दों के स्पष्ट उच्चारण पर विशेष बल दिया जाता है। दरभंगा परम्परा के वयोवृद्ध कलाकार पण्डित राम चतुर के अनुसार खण्डार बानी की विशेषता यह है कि उनमें गमकों की प्रधानता होती है। नौहार बानी के विषय में उनका मत यह है कि इस बानी की गायकी श्रृंगार–प्रधान होती है। डागर बानी के विषय में उन्होंने कोई भी उल्लेख नहीं किया है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि यद्यपि पण्डित भातखण्डे ने ध्रुपद की इन बानियों का सम्बन्ध स्वर–प्रयोग के ढंग से ही बतलाया है, तथापि आचार्य वृहस्पति इससे सहमत नहीं हैं। आपके अनुसार ध्रुपद की चारों बानियों का विकास अकबर युग के काफी बाद हुआ। मुहम्मद करम इमाम के उल्लेख के आधार पर आपने इन बानियों का सम्बन्ध प्रदेश अथवा जाति विशेष की भाषा से जोड़ा है। तद्नुसार ग्वालियर खण्डहार, नौहार, तथा डागर प्रदेश से सम्बद्ध होने के कारण इन्हें क्रमशः गौरारी, खण्डारी, नौहारी तथा डागुर बानी कहा जाने लगा। उस्ताद मुहम्मद करम इमाम के आधार पर आपने यह भी उल्लेख किया है कि तानसेन गौरारी, ब्रजचन्द्र नौहारी श्रीचन्द डागरी और सम्मोखनसिंह खण्डारी बानी के प्रवर्तक थे। 'गौरारी' शब्द ''ग्वालियरी'' का अपभ्रंश (ग्वालियरी–ग्वारेरी–गौरेरी–गौरारी) है, जिसका सम्बन्ध ग्वालियर की भाषा से है। यही भाषा श्रेष्ठ मानी गयी है और यही ध्रुपदकारों की शुद्ध बानी भी कही जाती है।[7]

दरभंगा की ध्रुपद परम्परा की अन्य जो विशेषताएँ बतलाई जाती है, वे इस प्रकार हैं–पद स्तुतिपरक होते है, आलाप और बंदिश दोनों में मींड़ और घसीट का काम अधिक होता है। जोड़ में लय बढ़ने पर भी स्वर प्रयोग गमक के साथ ही होता है। बंदिश के स्वरूप और सौन्दर्य की रक्षा के लिये ध्रुपद में लयकारी कम की जाती है। लयकारी ऐसे ध्रुपदों में ही की जाती है, जिनमें शब्द अधिक तथा गमक जैसे अलंकरण कम होते है। अर्थात् ध्रुपद दो प्रकार के माने जा सकते हैं, कुछ गमक प्रधान होते हैं, ऐसे ध्रुपदों में लयकारी नहीं की जाती। पद–प्रधान ध्रुपदों में लयकारी का काम होता है। वस्तुतः बंदिश के स्वरूप और सौन्दर्य की रक्षा के लिये ध्रुपद में लयकारी कम की जाती है। जितना काम होता भी है, उसमें इस बात का ध्यान रखा जाता है कि बंदिश के मूल रूप में निहित गमक प्रयोग की रक्षा हो सके। परन्तु वर्तमान युग में ध्रुपद में अलग–अलग छन्द के एवं अलग–अलग मात्राओं से विभिन्न एवं कठिन लयकारियां भी सुनने को मिलती है जिसके फलस्वरूप इसमें और भी श्रृंगार रस का संगम देखने को मिलता है। लयकारी का काम धमार में अधिक किया जाता है। आलाप में बड़ी गमकों का प्रयोग होता है, छोटी गमकों के कारण तान का स्वरूप वस्तुतः गमकयुक्त तान जैसा हो जाता है।

ध्रुपद और धमार की बंदिशों की दृष्टि से मल्लिक परम्परा अपेक्षाकृत समृद्ध मानी जाती है। ध्रुपद के समान धमार भी चार तुकों या चार अंगों से युक्त होते हैं। परन्तु प्रचार सामान्य रूप से दो तुकों के ध्रुपद–धमारों का ही है। इस परम्परा में कुछ ऐसे रागों का भी प्रचार रहा है, जो अन्यत्र प्राप्त नहीं होते, जैसे, विनोद, श्वेतमल्हार, खम्माजबहार, प्रमोल तथा प्रदौल। बन्दिशों की दृष्टि से अगर देखें तो दरभंगा घराने की बंदिशें अत्यधिक प्राचीन, साहित्यक एवं कलात्मक नजर आती है जिसके फलस्वरूप बंदिशों को सुनने का अपना एक अलग ही आनन्द होता है।

पहले इस परम्परा में भैरव के स्वरों से शिक्षण प्रारम्भ किया जाता था, परन्तु अब भैरव के साथ बिलावल तथा यमन की स्वराबलि से शिक्षण कार्य प्रारम्भ किया जाता है। स्वरज्ञान करवाने के लिये प्रारम्भ के छः माह अथवा एक वर्ष तक एक–एक स्वर के सीधे प्रयोग पर बल दिया जाता है। साथ ही पलटे भी सिखाये जाते है। गुरू–शिष्य परम्परा के अंतर्गत इस घराने में संगीत की शिक्षा प्रदान की जाती रही है। घराने के अनुशासन एवं परम्परा का भी पालन होता आ रहा है। दरभंगा घराने की विशेषता इन सभी लक्षणों से परिपूर्ण एवं सुसज्जित रही है। जिसका उदाहरण, देश व विदेशों में फैले तमाम सुविख्यात एवं प्रयत्नशील छात्र–छात्राएँ है, जो इस घराने को आगे बढ़ा रहे हैं।

***संदर्भ :***


*(1) यजुर्वेदी, श्रीमती सुलोचना एवं आचार्य वृहस्पति : खुसरो, तानसेन तथा अन्य कलाकार, पृ0 200.*

***(2)** यजुर्वेदी, श्रीमती सुलोचना एवं आचार्य वृहस्पति : खुसरो, तानसेन तथा अन्य कलाकार, पृ0 132, 134.*

***(3)** आचार्य बृहस्पति : ध्रुवपद और उसका विकास, पृ0 232–302.*

***(4)** यजुर्वेदी, श्रीमती सुलोचना एवं आचार्य वृहस्पति : खुसरो, तानसेन तथा अन्य कलाकार, पृ0 132.*

***(5)** आचार्य बृहस्पति : ध्रुवपद और उसका विकास, पृ0 208.*

***(6)** आचार्य बृहस्पति : ध्रुवपद और उसका विकास, पृ0 208.*

***(7)** आचार्य बृहस्पति : ध्रुवपद और उसका विकास, पृ0 248–49.*


❁❁